SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

जनजातीय भाषाएँ : संरक्षण एवं संवर्धन

अनामिका कुमारी, (Ph.D.),
पूर्व शोध–सहायक भाषा केन्द्र, झारखंड केन्द्रीय विश्वविद्यालय, रांची, झारखण्ड़, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
अनामिका कुमारी, (Ph.D.),
पूर्व शोध–सहायक भाषा केन्द्र, झारखंड केन्द्रीय विश्वविद्यालय, रांची, झारखण्ड़, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 22/10/2020
Revised on : -----
Accepted on : 29/10/2020
Plagiarism : 00% on 22/10/2020

Plagiarism Checker X Originality Report
Similarity Found: 0%

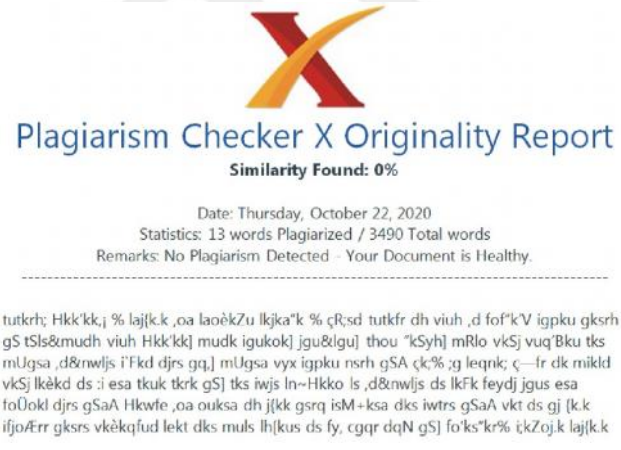

Date: Thursday, October 22, 2020
Statistics: 13 words Plagiarized / 3490 Total words
Remarks: No Plagiarism Detected - Your Document is Healthy.

---

tutkrh; Hkk'kk,¡ % laj{k.k ,oa laoèkZu lkjka"k % çR;sd tutkfr dh viuh ,d fof"k'V igpku gksrh gS tSls&mudh viuh Hkk'kk] mudk igukok] jgu&lgu] thou "kSyh] mRlo vkSj vuq'Bku tks mUgsa ,d&nwljs i`Fkd djrs gq,] mUgsa vyx igpku nsrh gSA çk;% ;g leqnk; ç—fr dk mikld vkSj lkèkd ds :i esa tkuk tkrk gS] tks iwjs ln~Hkko ls ,d&nwljs ds lkFk feydj jgus esa foÜokl djrs gSaA Hkwfe ,oa ouksa dh j{kk gsrq isM+ksa dks iwtrs gSaA vkt ds gj {k.k ifjoÆrr gksrs vkèkqfud lekt dks muls lh[kus ds fy, cgqr dqN gS] fo'ks"kr% i;kZoj.k laj{k.k

शोध सार

प्रत्येक जनजाति की अपनी एक विशिष्ट पहचान होती है जैसे–उनकी अपनी भाषा, उनका पहनावा, रहन–सहन, जीवन शैली, उत्सव और अनुष्ठान जो उन्हें एक–दूसरे पृथक करते हुए, उन्हें अलग पहचान देती है। प्रायः यह समुदाय प्रकृति का उपासक और साधक के रूप में जाना जाता है, जो पूरे सद्भाव से एक–दूसरे के साथ मिलकर रहने में विश्वास करते हैं। भूमि एवं वनों की रक्षा हेतु पेड़ों को पूजते हैं। आज के हर क्षण परिवर्तित होते आधुनिक समाज को उनसे सीखने के लिए बहुत कुछ है, विशेषतः पर्यावरण संरक्षण के तौर–तरीके। हालांकि, अब उनका अस्तित्व भी खतरे में है क्योंकि आधुनिकीकरण और मशीनीकरण के इस दौर में वनों की अंधाधुंध कटाई के कारण जनजाति न सिर्फ़ आर्थिक रूप से कमजोर हो रहें हैं बल्कि उनके भाषिक, सांस्कृतिक और सामाजिक मूल्य भी नित नए परिवर्तनों से प्रभावित हो रहें हैं। अतः भारत के जनजातीय आबादी के लिए शिक्षा के अवसर, विशेष रूप से उच्चशिक्षा और अनुसंधान सुविधाएं प्रदान करने हेतु, आदिवासी कला में शिक्षण और अनुसंधान सुविधाओं, परंपरा, संस्कृति, भाषा, औषधीय प्रणाली, सीमा शुल्क, वन आधारित आर्थिक गतिविधियों, वनस्पति, जीव और जनजातीय क्षेत्रों के प्राकृतिक संसाधनों से संबंधित प्रौद्योगिकियों में उन्नति प्रदान करके ज्ञान का प्रसार, संरक्षण एवं संवर्धन करने हेतु उचित पहल, नई नीति तथा परियोजनाओं की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द

जनजाति, जनजातीय भाषा, संरक्षण, संवर्धन, क्षेत्रीय भाषा, बहुसंख्यक भाषा, प्रलेखन।

'जनजाति अथवा आदिवासी' हेतु 'अनुसूचित जनजाति' शब्द का सबसे पहला प्रयोग भारत के संविधान

में हुआ था। अनुच्छेद 366 (25) में अनुसूचित जनजातियों को" ऐसी जनजातियां या जनजाति समुदाय या इनमें सम्मिलित जनजाति समुदाय के भाग या समूहों को संविधान के प्रयोजनों हेतु अनुच्छेद 342 के अधीन अनुसूचित जनजाति माना गया है। निग्रिटो मानव समूह भारत में प्रवेष करने वाला पहला समूह है। भारत के विभिन्न प्रदेशों में अनेक जनजातियाँ निवास करतीं हैं। भारत की जनजातियाँ विभिन्न क्षेत्रों में रहते हुए अपनी संस्कृति के माध्यम से भारतीय संस्कृति को एक विशिष्ट संस्कृति का रूप में देने में योगदान करती हैं। अनेकता में एकता ही भारत की संस्कृति है और उस अनेकता की छाप एक दूसरे की संस्कृतियों पर पड़ी। चूंकि जनजातियाँ विभिन्न हैं स्वाभाविक है कि उनकी संस्कृति में भी विविधता है। अतः इनकी वैविध्यपूर्ण संस्कृति ने जिस भारतीय संस्कृति को उभारने में योगदान किया, वह भी विविधता को धारण करने वाली हुई। भाषा के साथ भी यही स्थिति है और आर्यों की भाषा के कारण द्रविड़ों एवं अन्य भाषा दुभाषियों की भाषाएँ भी प्रभावित हुई तथा दूसरी ओर इनकी भाषाओ से आर्यों की भाषाएँ भी प्रभावित हुई।

भारत में जनजाति समूह का निवास

भारत में मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, एवं केरल राज्यों के पहाड़ी तथा वन क्षेत्रों और अंडमान द्वीपों में निग्रिटो प्रजाति के मानव समूह हैं। उत्तर–पूर्व में आंध्रप्रदेश में कृष्णा नदी पर अन्नामलाई पहाड़ियों के अर्ध–गोलाकार भाग में चेंचू जनजाति रहती है। पश्चिमी घाट के सहारे दक्षिण कन्नड़, कुर्ग की पहाड़ियों के निचले इलाकों में युरुबा और टोडा रहते हैं। गद्दी, बकरवाल जम्मू–कश्मीर की अनुसूचित जनजातियाँ हैं।

शैम्पेन, ओंग, जारवा, सेंटलीज अंडमान एवं निकोबार में रहने वाली जनजातियाँ हैं। मंगोल प्रजाति समूह का आदि स्थान चीन है, यह प्रजाति उत्तरप्रदेश, पंजाब, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल और मालाबार तट पर पाई जाती है। 2011 की जनगणना के अनुसार अनुसूचितजातियों की जनसँख्या 104,28,034 है। जो कुल जनसँख्या का 8.6 प्रतिशतहै। कृषि से संबंधित होने के कारण अनुसूचितजातियां मुख्यतः उत्तरी भारत के विशाल उपजाऊ तटीय मैदानों में संकेंद्रित हैं। देश के पहाड़ी तथा जंगली क्षेत्रों में जहाँ जनजातीय लोगों का संकेंद्रण है, वहीं अनुसूचित जातियों की संख्या काफी विरल है। 2001 एवं 2011 की जनगणना के अनुसार 5 राज्यों पंजाब, चंडीगढ़, हरियाणा, दिल्ली एवं पुदुचेरी में कोई भी अनुसूचित जनजातियां, अनुसूचित नहीं हैं।

1971 में केवल 108 भाषाओं की सूची ही सामने आई थी क्योंकि सरकारी नीतियों के हिसाब से किसी भाषा को सूची में शामिल करने के लिए उसे बोलने वालों की तादाद कम से कम 10 हजार होनी चाहिए। यह भारत सरकार ने कट ऑफ प्वाइंट स्वीकारा था। इसलिए इस बार भाषाओं के बारे में निष्कर्ष निकालने के लिए हमने 1961 की सूची को आधार बनाया। सुप्रसिद्ध भाषाविद् गणेशदेवी के अनुसार भारत की 250 भाषाएं विलुप्त हो गई हैं। जब 'पीपुल लिंग्विस्टिस्क सर्वे' किया गया तब 1100 में से सिर्फ 780 भाषाएं ही देखने को मिलीं। शायद हमसे 50–60–100 भाषाएं रह गईं हों क्योंकि भारत एक बड़ा देश है और यहां 28 राज्य हैं। हमारे पास इतनी ताकत नहीं थी कि हम पूरे देश को कवर कर सकें। इस काम के लिए बहुत से लोग चाहिए थे। हम यह मान भी लें कि हमें 850 भाषाएं मिल गईं हैं, तब भी 1100 में से 250 भाषाओं के विलुप्त होने का अनुमान है।

2010 में आई यूनेस्को की 'इंटरेक्टिव एटलस' की रिपोर्ट बताती है कि अपनी भाषाओं को भूलने में भारत अव्वल नंबर पर है। दूसरे नंबर पर अमेरिका (192 भाषाएं) और तीसरे नंबर पर इंडोनेशिया (147 भाषाएं) है। दुनिया की कुल 6000 भाषाओं में से 2500 पर आज विलुप्त होने का खतरा मंडरा रहा है। 199 भाषा या बोलियां ऐसी हैं जिन्हें अब महज 10–10 और 178 को 10 से 50 लोग ही बोलते समझते हैं। यानी इनके साथ ही ये भाषाएं खत्म हो जाएंगी।

यूनेस्को के 'एटलस आफ द वर्ल्ड सलैंग्वेजेज इन डेंजर' के मुताबिक अकेले उत्तराखंड में ही गढ़वाली, कुमाऊंनी और रोंगपो सहित दस बोलियां खतरे में हैं। पिथौरागढ़ की दो बोलियां 'तोल्चा' व 'रंगकस' तो विलुप्त भी हो चुकी हैं। वहीं उत्तरकाशी के बंगाण क्षेत्र की बंगाणी बोली को अब मात्र 12 हजार लोग बोलते हैं। पिथौरागढ़

की 'दारमा' और 'ब्यांसी', उत्तरकाशी की 'जाड' और देहरादून की 'जौनसारी' बोलियां खत्म होने के कगार पर हैं। दारमा को 1761, 'ब्यांसी' को 1734, 'जाड' को 2000 और 'जौनसारी' को 1,14,733 लोग ही बोलते–समझते हैं। एटलस के मुताबिक 20,79,500 लोग 'गढ़वाली', 20,03,783 लोग 'कुमाऊंनी' और 8000 लोग 'रोंगपो' बोली के क्षेत्र में रहते हैं लेकिन, इसका यह मतलब नहीं है कि यहां रहने वाले सभी लोग ये बोलियां जानते ही हों। 'राजी' बोली पर देश में पहली पीएचडी करने वाले भाषाविद् डॉ. शोभाराम शर्मा बताते हैं कि यूनेस्को ने पिथौरागढ़ और चंपावत जिलों में रहने वाले 'राजी' जनजाति की बोली को एटलस में शामिल नहीं किया है, यह भाषा भी विलुप्ति की कगार पर है। अब उत्तराखंड में राजी या वनरावत जनजाति के महज 217 लोग ही बचे हैं।

मध्यप्रदेश में भी करीब दर्जन भर बोलियां विलुप्ति के मुहाने पर पहुंच चुकी हैं। प्रदेश की कुल आबादी का 35.94 फीसदी अब भी आंचलिक बोलियों पर ही निर्भर है लेकिन, इन आदिवासी बोलियों पर बड़ा संकट मंडरा रहा है। भीली, भिलाली, बारेली, पटेलिया, कोरकू, मवासी निहाली, बैगानी, भटियारी, सहरिया, कोलिहारी, गौंडी और ओझियानी जैसी जनजातीय बोलियां यहां सदियों से बोली जाती रही हैं, लेकिन अब ये बीते दिनों की कहानी बनने की कगार पर हैं। प्रदेश के एक बड़े हिस्से, करीब 12 जिलों में बोली जाने वाली 'मालवी' भी अब दम तोड़ने लगी है। मध्यप्रदेश के 8.58 फीसदी (51,75,793) लोगों की मातृभाषा 'मालवी' है। उज्जैन में मुंशी प्रेमचंद के नाम परबनी सृजनपीठ के निदेशक साहित्यकार जीवन सिंह ठाकुर कहते हैं, 'मालवी' सहित आदिवासियों की कई अन्य बोलियों के उजड़ने की बात किसी बड़े हादसे से कम नहीं है। लेकिन इसे लेकर कहीं कोई पछतावा नजर नहीं आता है। यह हमारी सांस्कृतिक पहचान के खत्म होने की तरह है। मध्यप्रदेश आदिम जाति अनुसंधान एवं विकास संस्थान के अनुसंधान अधिकारी एल. एन. पयोधि बताते हैं, 'मध्यप्रदेश की 12 आदिवासी बोलियों पर विलुप्ति का खतरा मंडरा रहा है। हम इन बोलियों को बचाने का लगातार प्रयास कर रहे हैं। हमने खत्म होती हुई बोलियों–गौंडी, भीली और कोरकू– के शब्दकोश और व्याकरण बनाई है। अब बैगानी, भिलाली, बारेली और मवासी पर काम चल रहा है। इनमें ज्यादातर आदिवासी बोलियां हैं। चिंता यह भी है कि अब आदिवासियों के बच्चे भी अपनी बोली सीखने से कतराने लगे हैं।'

राजस्थान में आधा दर्जन बोलियां यूनेस्को की लुप्तप्राय बोलियों की सूची में शामिल हैं। राजस्थान के पश्चिम में मारवाड़ी के साथ मेवाड़ी, बांगडी, ढारकी, बीकानेरी, शेखावटी, खेराड़ी, मोहवाडी और देवडा वाटीय उत्तर–पूर्व में अहीर वाटी और मेवातीय मध्य–पूर्व में ढूंढाड़ी और उसकी उपबोलियां–तोरावटी, जैपुरी, काटेड़ा, राजावाटी, अजमेरी, किसनगढ़ी, नागरचैल और हाडौतीय दक्षिण–पूर्व में रांगडी व सौंधवाड़ी (मालवी) और दक्षिण में निमाड़ी बोली जाती है। घुमंतू जातियों की अपनी बोलियां हैं। जैसे–गरोडिया लुहारों की बोली–गाडी। इनमें ज्यादातर देवनागरी लिपि में ही लिखी जाती हैं। मायण लिपि को मान्यता नहीं मिली है। राजस्थानी को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करने के लिए अगस्त 2003 में राजस्थान विधानसभा ने संकल्प पारित किया था।

भारतीय भाषाएं

1961 की जनगणना के अनुसार वर्तमान भारत में 1652 से भी अधिक मातृ भाषाएं हैं, जो मूलरूप से 5 विभिन्न भाषायी परिवारों से संबंध रखती है। 1991 की जनगणनामें 10,400 मातृ भाषाओं के अपरिष्कृत आंकड़े सामने आए उन्हें 1576 मातृ भाषाओं में समायोजित किया गया। उन्हें उससे आगे 216 मातृ भाषाओं में तार्किक आधार पर उचित ठहराया और उन्हें 114 भाषाओं के अन्तर्गत वर्गीकृत किया गया। जो इस प्रकार हैं–अस्ट्रो–एशियाटिक (1.13 प्रतिशत की कुल जनसंख्या वाली 14 भाषाएं) द्राविड़यन (22.53 प्रतिशत की कुल जनसंख्या वाली 17 भाषाएं) इंडो–यूरोपियन (75.28 प्रतिशत की कुल जनसंख्या के साथ 19 इंडो–आर्यन भाषाएं) और जर्मनिक, 0.02 प्रतिशत की कुल जनसंख्या वाली एक भाषा) सेमितो–हार्मिटिक (0.01 प्रतिशत जनसंख्या 1 वाली एक भाषा) और तिब्बतो–बर्मन (0.97 प्रतिशत की कुल जनसंख्या वाली 62 भाषाएं) यहां यह नोट किया जाए कि पूरे भारत में 10,000 से कम जनसंख्या वाली मातृ भाषाओं की उपलब्ध 'अन्य' भाषायी सूचनाओं के आधार पर पहचान करना संभव नहीं है।

2011 की जनगणना

2011 की जनगणना के अनुसार देश के सवा अरब लोग 1652 मातृ भाषाओं में बात करते हैं। इसमें सबसे ज्यादा 42,20,48,642 लोग (41.03 फीसदी) हिंदी भाषी हैं, राजस्थानी बोलने वाले 1.83.55.613 (1.78 फीसदी) लोग हैं। मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र के 28,672 वर्गमील के बड़े क्षेत्र में भील रहते हैं, पर भीली बोलने वाले 95,82,957 लोग (0.93 फीसदी) और संथाली बोलने वाले तो मात्र 64,69,600 (0.63 फीसदी) लोग ही हैं। देश में लगभग 550 जनजातियां निवास करती हैं जिनकी अपनी–अपनी बोलियां भी हैं। लेकिन इनमें से कई बोलियों को बोलने वालों की तादाद अब घटकर सिर्फ हजारों में सिमट चुकी है। जनजातीय बोलियों को लिपिबद्ध किए जाने की अब तक कहीं कोई गंभीर प्रयास नहीं हुई है। इन्होंने अपने वाचिक स्वरूप में ही हजारों सालों का सफर तय किया है। जानकारों का मानना है कि जब तक इन बोलियों या भाषाओं को छात्रों के पाठ्यक्रम से नहीं जोड़ा जाता, तब तक इन्हें आगे बढ़ाने की बात बेमानी ही साबित होगी। खासतौर पर प्राथमिक शिक्षा में यह बहुत जरुरी है। प्राथमिक शिक्षा सिर्फ हिंदी और अंग्रेजी तक ही सिमट गई है। इस कारण बच्चे अपनी स्थानीय बोलियों से लगातार कटते जा रहे हैं, और अपनी बोलियों को लेकर उनके मन में हीन भावना भी आने लगी है। यदि समय रहते इन बोलियों के संरक्षण के लिए ठोस कदम नहीं उठाए जाते तो जल्द ही ये पूरी तरह से विलुप्त हो जाएंगी। यह सिर्फ एक बोली या भाषा की नहीं, मानव समाज की कई अमूल्य विरासतों की भी विलुप्ति होगी।

विलुप्त होने के कारणः भारत सरकार द्वारा 10,000 से कम लोगों द्वारा प्रयोग की जाने वाली भाषाओं को मान्यता नहीं दी जाती है।

सामुदायिक प्रवासन एवं आप्रवासन की प्रवृत्ति के कारण पारंपरिक रहन–सहन प्रभावित होती है, जिसके कारण क्षेत्रीय भाषाओं को क्षति पहुंचती है। बहुसंख्यक भाषाओं के प्रभाव के कारण रोज़गार के प्रारूप में परिवर्तन विलुप्तिकरण का पक्षधर है। सामाजिक, सांस्कृतिक एवं भाषिक मूल्यों में परिवर्तन। 'व्यक्तिवाद' की प्रवृत्ति में वृद्धि होना, समुदाय के हित से ऊपर स्वयं के हित को प्रथिमकता दिए जाने से भाषाओं पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। पारंपरिक समुदायों पर आधुनिकता और भौतिकता का अतिक्रमण जिसके कारण आध्यात्मिक और नैतिक मूल्य उपभोक्तावाद से प्रभावित होते है।

दो तरह की भाषाएं हुई लुप्त

इसके दो कारण हैं और भारत में दो प्रकार की भाषाएं लुप्त हुईं हैं। एक तो तटीय इलाकों के लोग 'सीफार्मिंग' की तकनीक में बदलावों से शहरों की तरफ चले गए। उनकी भाषाएं ज्यादा विलुप्त हुईं। दूसरे जो डीनोटिफाइड कैटेगरी है, बंजारा समुदाय के लोग, जिन्हें एक समय अपराधी माना जाता था। वे अब शहरों में जाकर अपनी पहचान छिपाने की कोशिश कर रहे हैं। ऐसे 190 समुदाय हैं, जिनकी भाषाएं बड़े पैमाने पर लुप्त हो गईं हैं। हर भाषा में पर्यावरण से जुड़ा एक ज्ञान जुड़ा होता है। जब एक भाषा चली जाती है तो उसे बोलने वाले पूरे समूह का ज्ञान लुप्त हो जाता है। जो एक बहुत बड़ा नुकसान है क्योंकि भाषा ही एक माध्यम है जिससे लोग अपनी सामूहिक स्मृति और ज्ञान को जीवित रखते हैं।

भाषा आर्थिक पूंजी भी

'फार्मिंग' की तकनीक में बदलाव आया और तटीय इलाकों के लोग शहरों में चले गए। इसी के साथ उनकी भाषाओं का पतन हो गया। भाषाओं का इतिहास तो 70 हजार साल पुराना है जब कि भाषाएं लिखने का इतिहास सिर्फ चार हजार साल पुराना ही है। इसलिए ऐसी भाषाओं के लिए यह संस्कृति का ह्रास है। खासकर जो भाषाएं लिखी ही नहीं गईं और जब वो नष्ट होती हैं, तो यह बहुत बड़ा नुकसान होता है। यह सांस्कृतिक नुकसान तो है ही, साथ ही आर्थिक नुकसान भी है। भाषा आर्थिक पूंजी होती है क्योंकि आज की सभी तकनीक भाषा पर आधारित तकनीक हैं। चाहे पहले की रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान या इंजीनियरिंग से जुड़ी तकनीक हो या आज के दौर का यूनिवर्सल अनुवाद, मोबाइल तकनीक सभी भाषा से जुड़ी हैं। ऐसे में भाषाओं का लुप्त होना एक आर्थिक नुकसान है।

शहर में हो भाषाओं के लिए जगह भाषा बचाने का मतलब है कि भाषा बोलने वाले समुदाय को बचाना। ऐसे समुदायों के लिए जो नए विकास के विचार से पीड़ित हैं, उनके लिए एक माइक्रोप्लानिंग की जरूरत है। हर समुदाय चाहे वह सागर तटीय हो, घुमंतू समुदाय हो, पहाड़ी इलाकों, मैदानी और शहरी सभी समुदायों के लोगों के लिए अलग योजना की जरूरत है। बहुत से लोग शहरीकरण को भाषाओं के लुप्त होने का कारण मानते हैं, लेकिन मेरे हिसाब से शहरीकरण भाषाओं के लिए खराब नहीं है। शहरों में इन भाषाओं की अपनी एक जगह होनी चाहिए। बड़े शहरों का भी बहुभाषी होकर उभरना जरूरी है।

सरंक्षण हेतु प्रयास

भाषा के अस्तित्त्व को सुरक्षित रखने का सबसे बेहतर तरीका ऐसे विद्यालयों का विकास करना है जिनमें अल्पसंख्यकों की भाषा (जनजातीय भाषाएँ) में शिक्षा प्रदान किया जा सके। जिससे भाषा का संरक्षण और उसे समृद्ध बनाने में सहायक होगा।

भारत की विलुप्त होती भाषाओं के संरक्षण और विकास के लिए एक विशाल डिजिटल परियोजना शुरू की जानी चाहिए।

विलुप्त होती भाषाओं के महत्त्वपूर्ण पक्षों जैसे–कथा–रूपांतरण, कथा–निरूपण, लोकसाहित्य तथा इतिहास आदि का श्रव्य–दृश्य प्रलेखन (Documentation) किया जाना चाहिए।

इस प्रकार के प्रलेखन क्षेत्र को विकसित करने हेतु ग्लोबल लैंग्वेज हॉट स्पॉट्स (Global Language Hotspots) जैसे प्रणाली का लेखन कार्यों में प्रयोग किया जा सकता है।

भाषाओं को सहेजने के प्रयास

कुछ संस्थान ऐसे भी हैं जो बोली–भाषाओं को सहेजने की दिशा में प्रयास कर रहे हैं जो निम्नवत् हैं :

भाषा संशोधन प्रकाशन केंद्र

यह बड़ौदा में स्थित है, पश्चिम भारत की जनजातीय बोलियों सहेजने की कोशिश कर रहा है। यह गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश और राजस्थान के सीमावर्ती इलाकों में रहने वाली आदिवासी जनजातियों की अर्थव्यवस्था, उनके वन–अधिकार, विस्थापन, परंपरा, खेती और सेहत से जुड़े ज्ञान आदि और इनके मौखिक साहित्य, गीत, कथाएं आदि मुद्दों पर काम कर रहा है। इस संस्थान द्वारा शोध और प्रकाशन का कार्य भी किए जा रहे हैं।

केंद्रीय भारतीय भाषा संस्थापन, मैसूर

मानव संसाधन विकास मंत्रालय का एक अधीनस्थ कार्यालय है, इस की स्थापना 1969 में की गई थी। इसकी स्थापना भारत सरकार की भाषा नीति को तैयार करने और इसके कार्यान्वययन में सहायता करने तथा भाषा विश्लेषण, भाषाशिक्षा शास्त्र, भाषा प्रौद्योगिकी और समाज में भाषा प्रयोग के क्षेत्रों में अनुसंधान के द्वारा भारतीय भाषाओं के विकास में समन्वय करने हेतु स्थापित की गई है। संस्थान बहुत सी विस्तृकृत योजनाओं के जरिए भारतीय भाषाओं को बढ़ावा देता है। अपने उद्देश्यों को बढ़ावा देने के लिए केन्द्रीय भारतीय भाषा संस्थान बहुत से कार्यक्रमों का आयोजन करता है, जिनमें से कुछ निम्नानुसार हैं:

भारतीय भाषाओं का विकास

इस योजना का आशय आदिवासी/लघु/अल्पसंख्यक वर्ग की भाषाओं सहित आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुसंधान, मानव संसाधन के विकास और सामग्री के सृजन के द्वारा भारतीय भाषाओं का विकास करना है।

सहायता अनुदान योजना

सहायता अनुदान योजना के अंतर्गत केन्द्रीय भारतीय भाषा संस्थान अधिक मात्रा में खरीद, आदिवासी भाषाओं सहित भारतीय भाषाओं (हिंदी, उर्दू, सिंधी, संस्कृत और अंग्रेजी को छोड़कर) में पाण्डुलिपियों और छोटी पत्रिकाओं के प्रकाशन में सहायता करके अलग–अलग व्यक्तियों और स्वयं सेवी संगठनों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराता

है। इसके पूर्व उप–निदेशक प्रो. जेसी शर्मा बताते हैं, 'बोलियां लगातार खत्म होने के कगार पर हैं। हमें आदिवासियों के बीच काम करते हुए इन्हें सहेजने की दिशा में काफी काम करने की जरूरत है। अपने स्तर पर हमने कुछ प्रयास शुरू किए हैं। इनका अच्छा परिणाम रहा है। बोली (भाषा) के साथ ही उसके परंपरागत ज्ञान को भी सहेजने की कोशिश कर रहे हैं। 'लेकिन ऐसे प्रयास बेहद सीमित ही हैं। इसका अंदाजा इस तथ्य से भी लगाया जा सकता है कि भाषा वैज्ञानिक ग्रियर्सन के बाद बीते लगभग 100 सालों में कभी बोलियों या भाषाओं का सर्वेक्षण तक नहीं हुआ है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक

इस विश्वविद्यालय को भारत के संसद के एक अधिनियम द्वारा स्थापित किया गया है। यह विश्वविद्यालय 2007 में अस्तित्व में आया और जुलाई 2008 को कार्रवाई में आया। विश्वविद्यालय के क्षेत्राधिकार पूरे देश में है, और यह पूरी तरह से विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के माध्यम से केंद्र सरकार द्वारा वित्तपोषित है। मुख्य रूप से इसके स्थपना के पीछे कुछ मुख्य उद्देश्य हैं जैसे–भारत के जनजातीय आबादी के लिए शिक्षा के अवसर, विशेष रूप से उच्चशिक्षा और अनुसंधान सुविधाएं प्रदान करने हेतु, आदिवासी कला में शिक्षण और अनुसंधान सुविधाओं, परंपरा, संस्कृति, भाषा, औषधीय प्रणाली, सीमा शुल्क, वनआधारित आर्थिक गतिविधियों, वनस्पति, जीव और जनजातीय क्षेत्रों के प्राकृतिक संसाधनों से संबंधित प्रौद्योगिकियों में उन्नति प्रदान करके ज्ञान का प्रसार करने हेतु ।

विशेष रूप से सांस्कृतिक अध्ययन और आदिवासी समुदायों पर अनुसंधान करने के लिए, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालयों और संगठनों के साथ सहयोग करने के लिए। आदिवासी केंद्रित विकास के मॉडल तैयार करने के लिए, रिपोर्ट और मोनोग्राफ प्रकाशित और जनजातियों से संबंधित मुद्दों पर सम्मेलनों और सेमिनारों का आयोजन करने के लिए और विभिन्न क्षेत्रों में नीतिगत मामलों को जानकारी प्रदान करने हेतु एवं इनका प्रबंध करने में सक्षम जनजातीय समुदायों के सदस्यों को बढ़ावा देने का प्रबंध है और अपने स्वयं के एक विश्वविद्यालय के माध्यम से उच्चशिक्षा तक पहुँच द्वारा अपनी जरूरतों की देख–भाल के लिए उचित कदम उठाने के लिए संकल्परत् है।

सभी भाषाओं को मिले सुरक्षा

हिंदी को डरने की जरूरत नहीं क्योंकि हिंदी दुनिया की भाषाओं के मामले में चीनी और अंग्रेजी के बाद सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है। वह स्पेनिश से आगे निकल गई है। मगर छोटी भाषाओं का बहुत खतरा है। जिसकी लिपि नहीं हैं उसे बोली कहने का चलन है। ऐसे में अगर देखें तो अंग्रेजी की भी लिपि नहीं है, वह रोमन प्रयोग करती है। किसी भी लिपि का प्रयोग दुनिया की किसी भी भाषा के लिए हो सकता है। जो भाषा प्रिंटिंग टेक्नोलॉजी में नहीं आई, वह तो तकनीकी इतिहास का हिस्सा है न कि भाषा का अंगभूत अंग। सरकारें न तो भाषा को जन्म दे सकती हैं और न ही भाषा का पालन करा सकती हैं। मगर सरकार की नीतियों से कभी–कभी भाषाएं समय से पहले ही मर सकती हैं। इसलिए सरकार के लिए जरूरी है कि वह भाषा को ध्यान में रखकर विकास की माइक्रोप्लानिंग करे। हमारे देश में राष्ट्रीय स्तर की योजनाएं बनती हैं, और राज्यों में इसकी ही छवि देखी जाती है। इसी तरह पूरे देश में भाषा के लिए योजना बनाना जरूरी है। 1952 के बाद देश में भाषावार प्रांत बने। इसीलिए माना जाता है कि हर राज्य उस भाषा का राज्य है, चाहे वह तमिलनाडु हो, कर्नाटक हो या कोई और। हमने शेड्यूल में सिर्फ 22 भाषाएं रखी हैं। केवल उन्हें ही सुरक्षा देने के बजाय सभी भाषाओं को बगैर भेदभाव के सुरक्षा देना जरूरी है। अगर सरकार ऐसा नहीं करेगी तो बाकी सभी भाषाएं मृत्यु के रास्ते पर चली जाएंगीं।

निष्कर्ष

हालांकि नई शिक्षा नीति में स्कूली बच्चों में भाषाओं, कलाओं और संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए कई पहलों पर चर्चा की गई है, जिसमें स्कूल के सभी स्तरों में संगीत, कला और शिल्प पर अधिक जोर दिया गया है। बहुभाषावाद को बढ़ावा देने के लिए तीन भाषा के फार्मूले का शीघ्र कार्यान्वयन, जहां भी संभव हो स्थानीय भाषा में अध्यापन, अधिक अनुभवात्मक भाषा सीखने की व्यवस्था, स्थानीय विशेषज्ञता के विभिन्न विषयों में मास्टर

प्रशिक्षकों के रूपमें उत्कृष्ट स्थानीय कलाकारों, लेखकों, शिल्पकारों और अन्य विशेषज्ञों की भर्ती, जनजातीय और अन्य स्थानीय ज्ञान सहित पारंपरिक भारतीय ज्ञानको पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है। जनजातीय और लुप्तप्राय भाषाओं सहित सभी भारतीय भाषाओं के संरक्षण और संवर्धन के प्रयासों को नए उत्साह के साथ लिया जाएगा। लोगों की व्यापक भागीदारी के साथ प्रौद्योगिकी और क्राउड सोर्सिंग इन प्रयासों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी। रक्षा मंत्रालय के तत्वावधान में, राज्य सरकारें आदिवासीबहुल क्षेत्रों में स्थित लोगों सहित उनके माध्यमिक और उच्चमाध्यमिक स्कूलों में एनसीसी को प्रोत्साहित कर सकती हैं। इससे छात्रों की प्राकृतिक प्रतिभा और अनूठी क्षमता का दोहन हो सकेगा, जिससे उन्हें रक्षा बलों में सफल भविष्य बनाने में सफलता मिलेगी। जनजातीय स्कूलों के शिक्षकों की योग्यताभारतीय मूल्यों, भाषाओं, ज्ञान, लोकाचार और जनजातीय परंपराओं सहित परंपराओं में आधारित होना चाहिए, जबकि शिक्षा और शिक्षाशास्त्र में नवीनतम प्रगति की भी पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए।

संदर्भ सूची

Book

1. अनुशब्द, (2017). *पूर्वोत्तरभारत का जनजातीय साहित्य*, वाणी प्रकाशन : नईदिल्ली.
2. बोरा, राजमल (2004). *भारत के भाषा–परिवार*, आलेख प्रकाशन : दिल्ली.
3. गुप्ता, रमणिका (2008). *आदिवासी साहित्य यात्रा*, राधाकृष्ण प्रकाशन : नईदिल्ली.
4. शर्मा, रामविलास (2009). *भारत की भाषा समस्या*, राजकमल प्रकाशन : नईदिल्ली.

Website

1. https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1644745
2. http://www.vivacepanorama.com/language-religion-and-culture/
3. https://hi.vikaspedia.in/education/91d93e93091692394d921-93093e91c94d92f/91d93e93091692394d921-915940-91c92891c93e92493f92f93e901/90993093e901935-91c92891c93e92493f/92d93e930924-915940-91c92891c93e92493f92f93e901-2013-90f915-92a93093f91a92f

****